२१ इध्मा

२१ इध्म- पलाश की लकड़ी को काटकर इध्म बनायी जाती है। ये एक हाथ लम्बी होती है। प्रकृतियाग में इनकी संख्या पन्द्रह एवं विकृतियाग में सत्रह या इक्कीस होती है। ''पालाशोऽष्टादशसंख्यारत्निमात्रकाष्ठकः, दे.वा.प.-पृष्ठ ४

२२ बर्हि

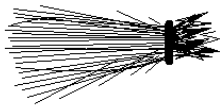

२२ बर्हि- अग्निशाला की वेदि में बिछाये जाने वाले दर्भसमूह को बर्हि कहते हैं।
तृणसंज्ञास्तु ये दर्भा एकपत्राः स्मृतास्तु ते ।
ते बर्हिः संज्ञकादर्भारत्निमात्राधिकाश्च ये॥ यज्ञपार्श्व परिशिष्ट- श्लोक ९

२३ पुरोडाशपात्री

२३ पुरोडाशपात्री- यह एक वारणकाष्ठ का प्रादेशमात्र चतुरस्र पात्र है। इन्हीं पर पुरोडाश रखे जाते हैं। एक कपाल पर श्रृत पुरोडाश को रखने के लिए यही पात्री सबिला होती है। ''पुरोडाशाख्यपात्री च प्रादेशाश्चतुरस्रिकाः।
मध्ये तु दर्पणाकारा मूले दण्डसमन्विताः॥''
यज्ञपार्श्व परिशिष्ट- श्लोक ११९-१२०

२४ प्राशित्रहरण

२४ प्राशित्रहरण- यह यज्ञपात्र वारणकाष्ठ से बनता है। इस पर प्राशित्रसंज्ञक हवि को रखकर ब्रह्मा को दिया जाता है। इसकी लम्बाई पाँच अंगुल और चौड़ाई चार अंगुल होती है। पीछे की ओर दो अंगुल का दण्डा होता है। ये दो होते हैं। एक पर पुरोडाश रखा जाता है और दूसरा ऊपर से ढँका जाता है।
प्राशित्रहरणं कुर्यात् पञ्चाङ्गुलप्रमाणकम्।
आदर्शाकारवन्मध्ये० ॥ यज्ञपार्श्व परि.- श्लोक १२२

२५ षडवत्त

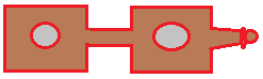

२५ षडवत्त- इडोपह्वान हो चुकने पर अध्वर्यु द्वारा आग्नीध्र को षडवत्त भाग दिया जाता है। वह भाग जिस पात्र पर रखा जाता है, उसे भी षडवत्त कहते हैं। उपर्युक्त पात्र पर दो बार आज्य, दो बार पुरोडाश का भाग और पुनः दो बार आज्य रखने के कारण इस पात्र का नाम षडवत्त यथार्थ है। ''अग्नीधे षडवत्तम्०।
का.श्रौ.सू.- ३/४/१६

२६ द्रोणकलश (प्रणीता)

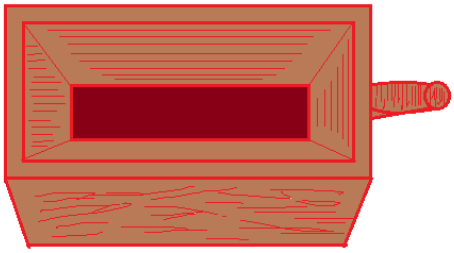

२६ द्रोणकलश- यह विकङ्कतकाष्ठ का यज्ञपात्र है। इसकी लम्बाई अठारह अंगुल और चौड़ाई बारह अंगुल रहती है। मध्य में गर्तवाला और चारों ओर परिधियुक्त होता है। इसमें सोमरस छाना जाता है। ''द्रोणकलश०कुर्यादरत्निमात्राणि०।
यज्ञपार्श्व परि.- श्लोक ११८

२७ होतृपीठ

२७ होतृपीठ- जिस यज्ञकाष्ठनिर्मित पीठ पर बैठकर होता सामिधेनी ऋचा पढ़ता है, वह होतृपीठ है। ''आसनानि चारत्निमात्रदीर्घाणि प्रादेशमात्रविपुलानि।'' दे.वा.प.- पृ ७

२८ शूर्पम्

(१)

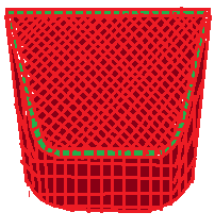

(२)

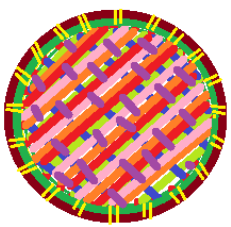

२८ शूर्पम्- यह पात्र बाँस से बना होता है। यज्ञ के लिए जंगल से शकट पर लादकर धान या **व्रत** लाया जाता है। उसे कूटकर इसी शूर्प से पछोड़कर साफ किया जाता है। शूर्प वैणवमेव च० । दे.वा.प.- पृष्ठ ६